11.06.2019

धरोहर के झरोखे से

डेक

श्रीपत राय व भैरव प्रसाद गुप्त द्वारा संपादित कहानी पत्रिका के नववर्षांक 1957 में प्रकाशित रामकुमार वर्मा की कहानी "डेक" साहित्यानुरागियों के लिए प्रदर्शित की जा रही है–

सुबह से ही सर्दी अकस्मात् बहुत बढ़ गई थी। दिन–भर मेघाच्छन आकाश की छाया में समुद्र में उठती लहरें तेज़ हवा के साथ–साथ धमाचौकड़ी मचाती रहीं थीं। जिससे 15000 टन का भारी जहाज इधर–उधर डोल रहा था। योरोप (यूरोप) से लौटते यात्रियों के लिए सर्दी का यह अंतिम प्रकोप था।

खाने के बाद डेक सूनसान हो गया था। कुछ लोगों ने थोड़ी देर के लिए डेक पर सैर करने की कोशिश की थी, लेकिन सर्दी में ठिठुरते हुए वे शीघ्र ही अपने केबिनो में लौट गए थे या डाइनिंग रूप में जाकर नाचने लगे थे। कुछ बार में जाकर व्हिस्की आदि पीने लगे। जहाज की चहल–पहल में यकायक इस बाधा को देखकर कुछ यात्रियों का उत्साह फीका पड़ गया था, 'सी सिकनेस' की काली छाया उन्हें अपने बहुत समीप दिखाई देने लगी थी।

नवंबर की रात्रि थी। जहाँ बादल फट–से गए थे, वहाँ कुछ तारे दिखाई देने लगे थे, बाकी चारों ओर घना अंधकार फैला हुआ था। समुद्र और आकश में अंतर नहीं था। जहाज की उबा देनेवाली घड़घड़ाहट का स्वर इतने नियमित रूप से पिछले तीन दिनों से यात्रियों के कानों में आता था कि अब वह उनकी बातचीत में, खाने या सोने में, अकेले रहकर सोचने में बाधा नहीं बनता था।

निखिल डेक के एक कोने में रेलिंग पर झुका हुआ नीचे लहरों के उतार–चढ़ाव को देख रहा था। उसने सोचा कि मन और समुद्र की गहराई को कोई कभी माप नहीं सकता। उस क्षण में दोनों ने बड़ी समानता दिखाई थीं। उसने पूरी बाहों का नीले रंग का मोटा पुलोवर पहन रखा था और गला एक ऊनी मफलर

में लिपटा हुआ था। हवा के कारण उसके बाल माथे पर बिखर आए थे। वह पतले–दुबले, छरहरे बदन का युवक था, हल्की–हल्की मूँछें थीं, लंबी–पतली नाक थी और कनपटियों के पास उसकी नीली नसें चमकती थीं, चेहरे पर गंभीरता की छाप थी। वह तीन साल के बाद पेरिस से साहित्य के डायरेक्ट करके वापस लौट रहा था।

पीछे किसी की आहट पाकर चौंककर निखिल पीछे मुड़ गया। लेकिन एक स्टुअर्ड को डेक–कुर्सियों को तह की दीवार के सहारे लगाते देखकर निश्चिन्तता से उसने फिर अपनी पीठ मोड़ ली। लहरों से निकलता फेन डेक में लगी बिजलियों के प्रकाश में चमक रहा था। सर्दी से बचने के लिए उसने मफलर को गर्दन पर और भी ऊपर चढ़ा लिया। जहाज में चढ़ते समय जो उत्साह था उसमें तीन दिनों में शिथिलता–सी आ गई थी। कभी–कभी उसे विचार आता कि वह नाहक ही अभी लौट आया। इटली से उसकी तबीयत नहीं भरी थी। वेनिस की नहरों में गंडोलों पर सैर करना, फ्लोरेंस के किसी कैफे में बैठकर पुरानी इमारतों को देखना, रोम के फव्वारों के सामने खड़े होकर अतीत के स्वप्न देखना...फिर स्पेन देखने की बहुत इच्छा थी, एल ग्रेको के चित्र और तो लेदो की योजना उसकी कल्पना में ही दबी रही।

कुछ देर बाद लूसियेन उसके पास आकर खड़ी हो गई। रेलिंग पर झुककर उसने अपना चेहरा निखिल के चेहरे से सटा लिया। निखिल को उसकी गरम–गरम साँस अपने चेहरे पर आती जान पड़ी, जिससे उसका शरीर एकबारगी सिहर उठा। निखिल ने उसके चेहरे की ओर देखा, लेकिन अंधकार से स्पष्ट रूप से कुछ भी दिखाई नहीं दिया। लेकिन उसे ऐसा जान पड़ा, मानो वह अपने केबिन से क्रीम और पाउडर लगाकर आई हो। लूसियेन ने रेलिंग पर रखे निलिख के हाथ पर अपना हाथ धर दिया।

–क्या सोचते हो, निलिख?

–कुछ नहीं।

वे दोनों फ्रेंच में ही बात करते थे, क्योंकि लूसियेन को अंग्रेजी बहुत कम आती थी।

कुछ देर बाद लूसियेन फिर बोली–निखिल... निखिल ने उसकी ओर देखा।

–निखिल, मैं सोचती हूँ कि हम दोनों अगर एक ही केबिन में होते, तो यात्रा का आनंद दुगुना हो जाता। फिर यहाँ डेक पर सर्दी की रात में खड़े होने की जरूरत नहीं पड़ती। खाने के बाद आराम से अपने केबिन में बैठते और पोर्टहोल में से समुद्र की लहरों को देखते। –उसने एक लंबी साँस ली और निखिल के कुछ कहने के पूर्व ही रूँआसी आवाज में बोली–इस बात का मुझे हमेशा दुःख रहेगा कि हमने एक ही केबिन में यात्रा नहीं की।

निखिल उसका हाथ दबाता हुआ कहने लगा–इस जहाज में तुम्हें सीट मिल गई लूसियेन यही क्या कम है?

लूसियेन झुके–झुके ही बोली–इस बात से मुझे संतोष नहीं होता। रात को मुझे अपने केबिन में ठीक से नींद नहीं आती।

निखिल ने प्यार–भरे स्वर में कहा–कैसी बातें करती हो, लूसियेन? बस, दस–बारह दिनों की तो और बात है...–फिर समुद्र की ओर देखता हुआ कहने लगा– आज कहीं जमीन नहीं दिखाई दे रही है। कल रात को जब इटली और सिसली की सीमाओं से हमारा जहाज गुजरा था तो शहर कितने पास दिखाई दे रहे थे, सड़कों पर मोटरें तक दिखाई देती थीं।

लेकिन लूसियेन को इस विषय में कोई दिलचस्पी नहीं हुई। वह चुपचाप रेलिंग का सहारा लिए खड़ी रही। निखिल उसके 'सिलहेट' को देखता रहा। लूसियेन की नाक बच्चों–जैसी थी, जैसे चीनियों या जापनियों की होती है, चेहरे से बहुत कम ऊपर उठी हुई। –लूसियेन उसने बहुत दबे स्वर में कहा। यदि वे डेक पर न होते, तो वह अवश्य ही उसे अपनी बाँहों में समेट लेता, अपने होंठों से उसके होंठों को हँसाने की कोशिश करता। लेकिन डेक पर लोगों के देखने का भय था, विदेश से लौटते भारतीयों के कौतूहल को जगाने की आशंका सदा उसे बनी रहती थी। जहाज में चढ़ते ही इतने भारतीय यात्रियों को देखकर उसने लूसियेन को स्पष्ट रूप से समझा दिया था कि यात्रा में वे दोनों ऐसा आपसी व्यवहार रखेंगे, मानों वे केवल अभिन्न मित्र हों।

—चलो लूसियेन, ऊपर खुली छत पर थोड़र सैर करें। ये दोनों खुली छत पर आ गए, जहाँ दिन में कुछ यात्री डेक टेनिस खेला करते थे और एकांत—प्रेमी धूम में कंबल बिछाकर लेटे रहते थे या कोई किताब पढ़ा करते थे। एक कोने में बड़ी—बड़ी लकड़ी की दो नावें थीं, रस्सियों के कुछ ढेर थे। दोनों ओर से खुला होने के कारण हवा बहुत तेज थी।

—आज बहुत सर्दी है, —निखिल ने पैंट की जेबों में हाथ डालकर कहा।

—तुम्हें अपना कोट पहन लेना चाहिए था,—लूसियेन ने अपना हाथ उसके हाथ में डाल दिया। हवा में उसके भूरे बालों की लटें उसके माथे के ऊपर उड़ी जा रही थीं। दोनों धीरे—धीरे टहलने लगे।

—जहाज की यात्रा बड़ी अजीब—सी लगती है, निखिल। मैं जब कभी मार्सेई गई, तो किनारे से जहाजों को देखकर मेरे मन में बड़ा कौतूहल जागा करता था और जहाज में बैठकर यात्रा करने की कल्पना से ही मैं सिहर उठती थीं। तब नहीं सोचा था कि एक साथ चौदह दिनों की यात्रा करने को निकल पड़ूँगी।

—ओह, लूसियेन! —निखिल ने एक हाथ उसके गले में डालकर उसे अपने पास घसीट लिया— डार्लिंग, मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ!—और वह सोच रहा था कि काश, वे दोनों सदा इस जहाज पर ही यात्रा करते रहते! पृथ्वी पर कहीं उतरने की समस्या उनके सामने न आती। इसी तरह डेक की छत पर रात को वह अकेले में लूसियेन को प्यार करता। लूसियेन के सामने उसकी सारी चिंताएँ न जाने कहाँ गायब हो जाती थीं।

लूसियेन उसके बाल सहलाने लगी। लेकिन कभी उसकी उँगलियाँ उसके बालों में उलझकर बाहर निकलने का साहस न कर पातीं। वह धीमे स्वर में कहने लगी— लिखिल, जब तुम पास नहीं होते, तो मुझे बहुत डर—सा लगने लगता है। कभी—कभी ऐसा महसूस करने लगती हूँ, मानो कोई मुझे समुद्र में धकेल रहा हो।

निखिल चौंककर उसके चेहरे की ओर देखा— कभी—कभी तुम बच्चों —जैसी बातें करती हो, डार्लिंग!

नीचे डेक पर लोगों का हल्का–सा शोरगुल होने लगा था। निखिल उससे अलग हो गया। शायद नाच खत्म हो गया।

लूसियेन एक नाव का सहारा लिए खड़ी थी। हवा में उसका कोट उड़ रहा था। वह अपने दोनों हाथ कोट की जेबों में डाले थीं। कोट के कालरों को भी उसने ऊपर गर्दन तक चढ़ा लिया था।

–तुम्हें सर्दी लग रही है, लूसियेन?

–नहीं, मैं ठीक हूँ– उसने चिल्लाकर कहा–मैं अभी केबिन में लौटना नहीं चाहती! तुम लोगों से इतना डरते क्यों हो, निखिल? हमारे बारे में वे क्या सोचते हैं, इसकी फिक्र में मैं इन अमूल्य क्षणों को नहीं नष्ट कर सकती।

निखिल जानता था कि उन दोनों का अलग–अलग केबिनों में रहना, दिन–भर अन्य यात्रियों के साथ डेक–कुर्सियों पर अलग–अलग बैठे रहना लूसियेन को असह्य–सा जान पड़ता था। लेकिन वह क्या करे? इतना वह जानता था कि उन दोनों के पारस्परिक संबंधों के विषय में हमारे यात्री जितना कम जान सकें, उतना ही अच्छा होगा।

तुम अभी हिंदुस्तानियों को पूर्ण रूप से समझ नहीं पाई हो, लूसियेन ...–आगे इस बात को फिर उसने नहीं बढ़ाया–परसों हम लोग पोर्ट सईद पहुँच जायेंगे। काश कि हम लोग जा सकते! वहाँ मैं तुम्हें पिरेमिड दिखलाता।

लूसियेन निखिल का हाथ पकड़े खड़ी थी। कुछ भी कहने की उसकी इच्छा नहीं थी। उसे यह सोचकर बहुत सुख मिल रहा था कि वह निखिल से सटी रात के अँधेरे में खड़ी है, उससे अधिक और कुछ नहीं चाहिए। अंधकार में डूबे समुद्र में से उसे उजाला–सा–दिखाई दे रहा था। लहरों का जहाज के साथ भीषण संघर्ष वह सुन रही थी। लेकिन उसके भीतर सब–कुछ शांत था। हवा के थपेड़ों में उसने अपना चेहरा इस प्रकार आगे निकाल रखा था, मानो वह उनका स्वागत कर रही हो। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं।

वे दोनों खड़े थे। लूसियेन को चुप देखकर वह अपने विचारों में खो गया। बंबई में उसे लेने कोई नहीं आयेगा। उसने अपने परिवार को अपने आने की कोई

सूचना नहीं भेजी थी। लूसियेन के साथ बंबई की बंदरगाह पर वह इस प्रकार उतरेगा, मानो वह किसी अपरिचित शहर में आया हो। वे दोनों किसी होटल में चार–पाँच दिन रहेंगे। फिर लूसियेन को वहीं छोड़कर वह अकेला लखनऊ चला जाएगा। घर में अपने आने का तार भेज देगा। रेखा बहुत प्रसन्न होगी। तीन साल से वह उसकी प्रतीक्षा कर रही है। रेखा ने उसे अपने पत्रों में लिखा था कि उसे लिवाने वह बंबई आएगी, जैसे उसे छोड़ने आई थी। रेखा की बात सोचकर उसकी आँखों के सामने धुँधली–धुँधली परछाईयाँ सिमटने लगीं। लूसियेन के बारे में वह कैसे उसे बतालाएगा? उसकी सारी शक्ति खत्म सी होने लगती। इसके आगे वह कभी सोच नहीं पाता। गुत्थियाँ बहुत उलझी हुई होती। उसे अपने ऊपर क्रोध होने लगता कि क्यों वह स्वतंत्र नहीं है। लूसियेन से कभी उसने इन समस्याओं की चर्चा नहीं की। वह परिचित उनसे थी, लेकिन अपना चुप रहना ही उसने उचित समझा था। जिस रात को पेरिस में उसने लूसियेन को देखा और अपने घर के विषय में यह सब विस्तार से बतलाया था, तब भी इस मुद्रा में चुपचाप उदासीन भाव से सब सुनती रही थी, मानो वह किसी तीसरे व्यक्ति की कहानी हो। फिर कभी उन दोनों ने आपस में रेखा की चर्चा नहीं की, लेकिन निखिल का विश्वास था कि लूसियेन इस विषय पर कभी–न–कभी अवश्य सोचती होगी।

जब लूसियेन का निखिल के साथ हिुदस्तान आने का प्रोग्राम बना था,तब सीट के रुपए देने से पूर्व उन दोनों ने बड़ी गंभीरता से बातें की थीं। लूसियेन ने सीधे और धूमा–फिराकर बार–बार अपने भविष्य के बारे में निखिल की राय जानने की कोशिश की थी। अपने प्रति निखिल के प्रेम में उसे पूर्ण रूप से विश्वास था, लेकिन वह इन स्थितियों की कल्पना कर रही थी, जब निखिल को अकेले अपने बंधन काटने होंगे, अपनी विवाहिता स्त्री से नाता तोड़ना होगा। निखिल की बातों से वह आश्वस्त हो गई हो, ऐसी बात नहीं थी, लेकिन उसका अपना भी स्वार्थ था, निखिल को छोड़ देना उसे असंभव जान पड़ता था।

–क्यो सोचते हो, निखिल?

–तुम्हारे पास रहने पर तुम्हारे अलावा और कुछ नहीं सोचता, डार्लिंग!

–पोर्ट सईद से मैं अपने भाई को अदन में तार डाल दूँगी। वह हमें लेने आएगा। अदन में जहाज कितनी देर रूकेगा, निखिल?

—शायद तीन—चार घंटे रुकेगा।

—ओह, निखिल!—लूसियेन ने अपना एक हाथ उसकी कमर में डाल दिया—सारा दिन मैं रात का इंतजार बड़ी उत्सुकता से किया करती हूँ, जब इस छत पर हम अकेले अपनी दुनिया में खो जाते हैं, तो ऐसा लगता है कि अब तुम्हें मुझसे कोई छीन नहीं सकेगा।

निखिल को लूसियेन की इस प्रकार की भावुकता से कभी—कभी भय लगता था और इसका पता लूसियेन को न चल सके, इसलिए वह अपने प्रेम का प्रदर्शन करके उसे शांत करने की कोशिश किया करता था। वह धीमे स्वर में बोला—लूसियेन, डार्लिंग चलो, अब नीचे उत्तर चलें, ओस पड़ने लगी है।

लूसियेन ने उसके प्रस्ताव का विरोध नहीं किया। यदि वह उससे चलने के लिए न कहता, तो रात—भर तक वह छत पर खड़ी रहती। डेक पर पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ उतरने से पहले लूसियेन क्षण—भर के लिए ठिठककर खड़ी हो गई और उसका आशय समझकर निखिल ने अंतिम बार उसका चुंबन किया, यद्यपि उसका मन पूर्ण रूप से उस क्षण में डूब नहीं सका।

पोर्टसईद पर जब दोनों उतरे, तो निखिल को ऐसा जान पड़ा, मानो अचानक उसके हृदय से कोई बड़ा भारी बोझ उतर गया हो। निखिल ने महसूस किया कि निकट भविष्य की जो समस्याएँ मुँह बाए उसके सामने खड़ी थीं, उनकी चिंता उसके मस्तिष्क से दूर हो गई। अपने भीतर उसने एक नया उत्साह और स्फूर्ति पाई। पोर्टसईद के भीड़ से भरे बाजारों की चहल—पहल में उसे ऐसा लगा, जैसे वह स्वतंत्र हो, लूसियेन को पूर्ण रूप से अपनाने में उसके समाने कोई बाधा न हो। उसके बदले हुए व्यवहार को देखकर लूसियेन की प्रसन्नता की सीमा नहीं रही, कारण जानने की चिंता उसने नहीं की। निखिल का हाथ चौकन्नी आँखों से वह मिस्त्र की जिंदगी में दिलचस्पी लेती रही।

मौसम योरोप की अपेक्षा अधिक गर्म होने के कारण लूसियेन ने केवल एक स्कर्ट पहन रखी थी, जिसका गला बहुत नीचे तक खुला हुआ था और दोनों बाँहें नंगी थीं। पाँच दिनों तक जहाज की उबा देनेवाली नियमित जिंदगी में चार—पाँच घंटों की जो छुट्टी मिली थी उसका आनंद दोनों ही उठाना चाहते थे। बाहर किसी

रेस्तराँ में दिन का भोजन करने का दोनों ने फैसला किया था। सबसे पहले लूसियेन ने अपने भाई को अदन में तार डाली। निखिल के साथ हिंदुस्तान जाने की बात उसके पिता ने पेरिस से ही पत्र में लिख दी थी।

आज का मौसम बहुत अच्छा है, ऐसा नीला आसमान कभी यूरोप में दिखाई नहीं देता,—फिर लूसियेन के चेहरे को झुकर देखता हुआ निखिल कहने लगा——तुम्हें पेरिस की याद तो नहीं आ रही, लूसियेन?

लूसियेन उसकी ओर देखकर मुस्कुरा दी। उसकी नीली आँखों में खुशी चमक रही थी।

—मुझे ऐसा लग रहा है, जैसे मई के महीने में हम सर्जमीं पर टहल रहे हों। अगर मैं अकेला होता, तो मुझे पेरिस की बहुत याद आती। लेकिन तुम्हारे साथ ऐसा मालूम पड़ता है, जैसे पेरिस को मैं अपने साथ ही उठा लाया होऊँ!

—आज तुम बहुत खुश नजर आ रहे हो, निखिल! निखिल ने मुस्कुराते हुए कहा—आज पैरों के नीचे जमीन जो है। समुद्र और जमीन में कितना फर्क होता है।

—तुम्हें जहाज की यात्रा पसंद नहीं है?

—मुझे जहाज से नफरत हो गई है।

—काश कि यहाँ से हम रेलगाड़ी में हिंदुस्तान तक जा सकते!

लूसियेन ने छोटा—मोटा सामान खरीदा, जिससे पोर्टसईद की स्मृति उसके मन में बनी रहे। मिस्त्र के बारे में उसने निखिल से कितने ही प्रश्न पूछे। वह उसके विषय में सब—कुछ जान लेना चाहती थी।

रेस्तराँ में बैठकर निखिल ने लूसियेन को बतलाया कि पोर्टसईद हिंदुस्तान के शहरों से कितना मिलता—जुलता है। बड़े उत्साह से उसने गर्मियों की छुट्टियों का प्रोग्राम बनाया। पहाड़ों में उसे रानीखेत बहुत पसंद था। पेरिस आने से पूर्व दो साल रानीखेत में उसने अपनी गर्मियाँ काटी थीं। हिमालय का नाम सुनते ही लूसियेन रोमांचित हो जाती थी, उसके दिमाग में भाँति—भाँति के चित्र खींचने लगते थे। क्षण—भर के लिए भी निखिल के मन में रेखा का ध्यान नहीं आया।

—दो—तीन साल बाद हम फिर पेरिस आ जाएँगे,— निखिल बोला— लूसियेन, तुम्हें शायद पता नहीं कि पेरिस से मुझे कितना प्यार हो गया है। मैं महसूस करता हूँ कि अगर मैं पेरिस न आता, तो जिंदगी में एक बहुत बड़ा अभाव अनजाने में ही बना रहता, जिसका अहसास मुझे जीवन—भर नहीं होता।...और तुम...तुम कैसे मिलतीं, लूसियेन!

—अब हिंदुस्तान जाकर मेरी अधूरी जिंदगी भी पूर्ण हो जाएगी,—वह हँसकर बोली। उसने गौर से निखिल को सिर से पाँव तक देखा। पिछले तीन—चार महीनों के परिचय में बहुत—सी बार निखिल को देखने पर उसे कितनी ही नई बातें दिखाई दी थीं, तब भावनाओं की धारा विभिन्न दिशाओं में बहुत तेजी से बहने लगती थी और उसे जान पड़ता था कि इस नई अनुभूति को अपने में समालेना उसके सामर्थ्य की बात नहीं थी। कितने ही पुरुष उसके जीवन में आए थे, लेकिन निखिल उन—सबसे भिन्न था। उसका बाहरी आकषर्ण यद्यपि उन पुरुषों की अपेक्षा कम था, लेकिन लूसियेन ने कभी इसे महत्व नहीं दिया।

निखिल के जिन मित्रों ने योरोप में विवाह किए थे, उनके प्रति कभी उसके मन में आदर नहीं हो सका। बिना किसी ठोस कारण के वह कभी इन शादियों का पक्षपाती नहीं हो सका और मन—ही—मन यह सोचकर उसे प्रसन्नता भी होती थी कि कभी इस प्रकार की स्थिति उसके सामने नहीं आई। फिर वह विवाहित था, रेखा से वह प्रेम करता था। उसकी स्थिति उसके अन्य अविवाहित मित्रों से अलग भी थी। और लौटने से पूर्व एकाएक लूसियेन उसके जीवन में आ गई, मानो अब तक वह किसी उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा कर रही थी। फिर सब—कुछ बदल गई। वह एक बिल्कुल नई अनुभूति थी। लूसियेन के प्रेम में वह अपनी सुध—बुध खो बैठा। लूसियेन को अपने साथ लाते समय उसे ऐसा जान पड़ा, मानो जिस नए अध्याय का आरंभ पेरिस में हुआ था, वह उसी को जारी रखने के लिए उसके साथ आ रही हो।

—क्या सोच रहे हो? —यह प्रश्न पूछने में लूसियेन को बहुत आनंद आता था।

—तुम्हारे अलावा और क्या सोचता हूँ, डार्लिंग!—उसने अपने हाथ को अपने हाथों में दबा लिया—तुम मेरे साथ आने को राजी न होतीं, तो मैं क्या करता, लूसियेन? तुम्हारे त्याग को मैं कभी नहीं...

लूसियेन बीच में ही उसकी बात काट दी—बस—बस अब रहने दो। तुम्हारे साथ आने में मेरा अपना स्वार्थ क्या कम था।

रेस्तराँ में बैठे—बैठे लूसियेन को निखिल का उत्साह देखकर थोड़ा—भय—सा लगने लगा। जहाज में कभी—कभी वह अत्यंत गंभीर और सुस्त बन जाता था, डेक—कुर्सी पर बैठे—बैठे आँखें मूँदे वह अपने विचारों में उलझ जाता था और उस समय लूसियेन बिल्कुल उसके दिमाग से उतर जाती थीं, वह बातें करती रहती और वह बहुत संक्षेप में हाँ—ना किया करता। लूसियेन चिंतित हो जाती थी। वह सोचने लगी कि उन दोनों को अभी पेरिस में ही रहना चाहिए था, वह कहीं काम कर लेती, निखिल अध्ययन करता रहता, वे लेटिन क्वाटर्स में कहीं छोटा—सा मकान ले लेते। वहीं से वह अपने विवाह की बात घर पर लिख सकता था। अब वह चोरी के माल की तरह उसके साथ भागी जा रही थी।

—जब पेरिस आएंगे, तो ऐसे जहाज में यात्रा करेंगे, जो बंदरगाहों पर अधिक देर तक रुकता हो। तब काहिरा जाना संभव हो सकेगा। पिछली बार सूर्यास्त के समय हम पिरेमिड्स में थे, इस पहाड़ी से काहिरा की रोशनियाँ बड़ी सुंदर दिखाई देती हैं।

—डार्लिंग, पोर्टसईद के ये चार घंटे मैं कभी नहीं भूलूँगी।

निखिल ने सोचा कि लखनऊ में उसे और लूसियेन को इकट्ठे देखकर लोगों की उत्सुकता कितनी बढ़ जाएगी! लूसियेन के सौंदर्य को देखकर उसके मित्र उसका भाग्य सराहेंगे और सारी युनिवर्सिटी में उसकी चर्चा हुआ करेगी। उसकी अंग्रेजी सुनकर भी लोग हँसे बिना नहीं रहेंगे।

—तुम इन लोगों की भाषा समझते हो?—लूसियेन ने पूछा।

—नहीं हमारा भाषा बहुत भिन्न है।

—अरब देशों के बारे में बचपन में मैंने कुछ कहानी पढ़ी थीं और आज मुझे विश्वास नहीं हो पा रहा कि मिस्त्र के एक रेस्तराँ में बैठकर मैं खाना खा रही हूँ।

—और वह भी एक हिंदुस्तानी के साथ!—निखिल ने हँसकर कहा।

—निखिल!—क्षण—भर तक चुप रहने के बाद मेज पर झुकी—झुकी वह कहने लगी—तुम युवकों से कितने भिन्न हो, इस बात को मैं जानती हूं। युवकों में उदंड़ता मुझे अच्छी नहीं लगती, क्योंकि उसमें उनका बचपन झलकता है, जिनके साथ कुछ देर के लिए हँसी—मजाक किया जा सकता है, लेकिन गंभीरता से बातचीत नहीं की जा सकती।

फिर धीमे स्वर में आवेश में बोली—और ...और तुम्हारी गंभीरता से ही पहली बार मैं बहुत प्रभावित हुई, शायद इसलिए कि मैं स्वयं गंभीर नहीं हो सकती।

लूसियेन के बात करने के ढंग को देखकर निखिल को हँसी, आई—तुम मेरे विषय में ऐसा सोचती हो, लूसियेन, इस पर मुझे गर्व हो रहा है।

जहाज की ओर वापस लौटते समय दोनों अनुभव कर रहे थे कि उन्हें कोई ऐसी वस्तु मिल गई है, जिसे पाने की वे आशा नहीं कर रहे थे। दोपहर की धूप में एक—दूसरे का हाथ पकड़े उन्हें जान पड़ रहा था, जैसे जो बोझा उनपर लदा हुआ था, वह अब उतर चुका हो। दोनों के बीच में यात्रा के समय जो परछाइयाँ उभरने लगीं थीं, उनका कोई भी चिन्ह अब बाकी नहीं बचा था। लूसियेन सोचती थी कि इस तरह ये अपना जीवन पार कर लेंगे, एक —दूसरे का हाथ पकड़े ये एक—दूसरे का सहारा बने रहेंगे। और निखिल सोच रहा था कि यदि बंदरगाह पर चलकर उन्हें यह पता चले कि उनका जहाज छूट चुका है, तो हम—जैसा सुखी व्यक्ति संसार में दूसरा न होगा।

—अब कल स्वेज आएगा। स्वेज नहर में हमारा जहाज चलेगा।— लूसियेन की चाल में ऐसी लापरवाही झलक रही थी, मानो उसके दिमाग में सब—कुछ साफ हो, जैसे पोर्टसईद का नीला आकाश था—स्वेज में जहाज कितनी देर रुकेगा, निखिल?

—शायद दो—तीन घंटे।

—स्वेज शहर में भी सैर करेंगे। हमारी बगल में एक अंग्रेज स्त्री यात्रा कर रही है। यह कहती थी कि पोर्टसईद बड़ा खतरनाक शहर है, यहाँ दिन—दहाड़े लोगों की हत्याएँ हो जाती हैं। मुझे जीवित देखकर वह हैरान हो जाएगी। लेकिन बाजार बहुत गंदा था, कितनी मक्खियाँ थीं! लोग सफाई का ध्यान क्यों नहीं रखते। लेकिन यहाँ के लोग मुझे पसंद आए। उनके चेहरों को देखकर ऐसा जान पड़ता है, जैसे

जो–कुछ उनके मन में होता है, वही उनके चेहरों पर भी दिखाई देता है।– फिर यकायक निखिल की ओर देखकर उसे ऐसा लगा, मानो उसने एक भी शब्द न सुना हो। वह अपने ही विचारों में खोया हुआ चला जा रहा था। वह इस मुद्रा को पहचानती थी। क्षण–भर के लिए वह काँप गई सारे शरीर में एक सिहरन भी दौड़ गई आगे बढ़ना उसे असंभव प्रतीत होने लगा। निखिल इस तरह चला जा रहा था, मानो वह अकेला हो। लूसियेन का हाथ पकड़े हुए भी लूसियेन को उस समय यह भूल गया था।

–निखिल!– लूसियेन ने दाँत भींचते हुए कहा, लेकिन उसका स्वर निखिल तक नहीं पहुँचा। बहुत कठिनाई से वह अपनी रुलाई को रोक सकी।

जहाज के आगे बढ़ने के साथ–साथ निखिल को ऐसा जान पड़ता, मानो हर क्षण उसे एक भयानक विस्फोट की ओर ले जा रहा हो, जिससे वह अब बचने की चेष्टा कर रहा था। डाइनिंग रूम के बाहर दीवार पर लगे नक्शे को जब–जब वह देखता, जहाज की यात्रा को दिखलाने वाला छोटा–सा–पिन में लिपटा कागज का झंडा उसे बम्बई की ओर बढ़ता हुआ दिखाई देता और क्रोध में उसका मन कहता कि शीशे को तोड़कर इस छोटे–से झंडे को वह समुद्र में फेंक दे। पोर्टसईद से स्वेज तक उसकी दशा अपनी चरम सीमा पर जा पहुँची, क्योंकि पोर्टसईद में बिताए उन चंद घंटों की प्रतिक्रिया इतने जोर से हुई कि उसके तन–मन नियंत्रण करनेवाली कड़ियाँ छिन्न–भिन्न हो गईं और जितना हो उसके विरूद्ध उसने संघर्ष करना चाहा ही उलटा उसका परिणाम हुआ। 'सी सिकनेस' का बहाना करके वह अपने केबिन में लेटा रहा। लूसियेन को देखते ही उसका अंग–अंग काँप उठता, मानो किसी भूत की छाया उसने देख ली हो। लेकिन फिर आचानक एक शिथिलता ने उसे ढँक लिया। जिन शक्तियों के विरूद्ध वह अब तक लड़ रहा था, उनके हाथों में उसने अपने–आपको पूर्ण रूप से सौंप दिया और अनुभव किया कि उसके भीतर एक गहरी रिक्तता उभर आई हो और लूसियेन भी उसी रिक्तता का एक भाग बन गई हो।

लूसियेन ने सब–कुछ चुपचाप देखा, उसे समझने की कोशिश की। जिस विश्वास को लेकर वह पेरिस से चली थी, उसकी जड़ें उसे कमजोर दिखायी दीं। लेकिन लौटा जाना संभव नहीं था, यदि संभव होता, तो अवश्य लौट पड़ती। लेकिन

निखिल...निखिल को छोड़ देना क्या अब उसके बस की बात थी? पिछले तीन महीनों में धीरे–धीरे अपना सब–कुछ उसने निखिल के हाथों में सौंप दिया था, अपना परिवार, अपने दोस्त, अपना देश, अपनी भाषा...जो कुछ था, वह सब निखिल का था और जो उसे नहीं मिला था, उसे लेने वह निखिल के साथ चली आयी थी। उसे संदेह होने लगा कि निखिल शायद अब भी अपनी पत्नी से प्रेम करता है, देश के समीप आने पर अपनी स्त्री के बंधनों को वह कसता हुआ महसूस कर रहा है। उसकी आँखों में आँसू भर आते, वह केबिन में अपनी बर्थ पर लेटी–लेटी अपना चेहरा तकिए के भीतर छुपा लेती, जिससे उसकी सिसकियाँ उसके केबिन के दूसरे यात्रियों के कानों में न जा पहुँचे। उसके मन में एक भयानक द्वंद्व होने लगा। अंधकार में वह अपना रास्ता खोजने लगी।

–शायद तुम नहीं जानते, निखिल, कि तुम कितने बदले हुए दिखाई देते हो। इन आठ–नौ दिनों में तुम्हारी इतनी कायापलट हो गई, इस बात पर कोई सहज में विश्वास नहीं करेगा।–जब निखिल की चुप्पी उसके धैर्य की सीमा को पार कर जाती, तो वह इस प्रकार के प्रश्न पूछने लगती थी।

निखिल चौंककर लूसियेन की ओर देखता और अपने होठों पर जबरदस्ती मुस्कुराहट लाने की कोशिश करता, उसमें असफल होकर वह लूसियेन का हाथ पकड़ लेता।

पोर्टसईद में तुमने मुझे कितनी हिंदुस्तान की बातें बताई थीं– लखनऊ में गोमती के किनारे हम सैर किया करेंगे, गर्मियों में रानीखेत जाने का प्रोग्राम बनाया था। लेनिक पोर्टसईद के बाद फिर कभी तुमने उन–सब की चर्चा नहीं की।–लूसियेन का गला रुँध आया। डेक की कुर्सी पर बैठी वह धूप में चमकते समुद्र की लहरों को बड़े उदासीन भाव से देखने लगी।

–मैं भविष्य की बात ही तो सोचता रहता हूँ, लूसियेन,–निखिल धीमे स्वर में कहने लगा–कालेज की तरफ से ही मुझे शायद मकान मिल जाएगा। मकान के सामने हरी–हरी घास का छोटा–सा बाग होगा, जहाँ बैठकर हम शाम की चाय पिया करेंगे। फिर गोमती में बोटिंग किया करेंगे। उन मकानों से गोमती बहुत करीब है।...

लूसियेन की इच्छा हुई कि अपनी पूरी शक्ति लगाकर वह उससे कहे कि वह झूठ बोल रहा है, वह उसके बारे में नहीं सोच रहा, वह अपनी पत्नी की बात सोच रहा है। लेकिन निखिल की बात का प्रतिवाद करने को उसका मन नहीं हुआ, वह चुपचाप अपनी कुर्सी पर पाँव फैलाए बैठी रही। कुछ देर बाद वह मुस्कुराते हुए कहने लगी– यहाँ लोग समझने लगे हैं कि मैं तुम्हारे साथ भागकर आई हूँ।

उसकी बात सुनकर निखिल चौंका नहीं। यदि यात्रा के आरंभ में लूसियेन यह बात उससे कहती, तो उसकी चिंता बहुत बढ़ जाती, लेकिन अब उसके मन में कोई भय पैदा नहीं हुआ– लोगों को सोचने दो। उन्हें अपना वक्त काटने के लिए कोई–न–कोई विषय चाहिए और इससे बढ़कर दिलचस्प विषय उन्हें और कौन–सा मिलेगा।

मौसम बहुत सुंदर था। दिन–भर–नीला, शांत आकाश समुद्र पर अपनी छाया डाले रखता। रात को समुद्र से आती हुई हवा बहुत भली लगती थी। लोग यात्रा से तंग आ गए थे और बड़ी और बड़ी उत्सुकता से अदन के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। यह सोचकर उन्हें सान्त्वना मिलती थी कि एक बार अदन आने पर फिर जहाज बम्बई जाकर ही रुकेगा।

अदन जाने से एक दिन पूर्व शाम को निखिल और लूसियेन डेक से तंग आकर 'बार' में जाकर बैठ गए। ग्रामोफोन में जाज़ के रेकार्ड बज रहे थे। अस्त होते सूर्य की धुँधली किरणें 'बार' की खिड़की में से झांकती हुई सामने की दीवार पर विचित्र–सी आकृतियाँ बना रही थीं। 'बार' में अधिक यात्री नहीं थे। निखिल दीवार का सहारा लगाए पाँव फैलाकर बेंच पर बैठा हुआ सिगरेट का धुआँ छोड़ रहा था और लूसियेन वक्त काटने के लिए 'बार' में बैठे अन्य यात्रियों पर उड़ती–सी–निगाह डाल रही थी। दोनों के चेहरों पर एक सूनापन–सा सिमट आया था। दिल में न उत्साह था, न कौतूहल और न ही किसी प्रकार का संघर्ष।

–कल सुबह हम अदन पहुँच जाएंगे।

लूसियेन चुपचाप बैठी बियर के गिलास को घुमाती रही।

–अदन से बम्बई का सिर्फ चार दिन का रास्ता है। मैं समुद्र से तंग आ गया हूँ। जब जमीन पर उतरना ही है, तो चार–पाँच दिनों का इंतजार करना भी कठिन

हो जाता है।– फिर क्षण–भर के लिए रूककर कहने लगा– पहले मेरा मन करता था कि हम इसी तरह जहाज में यात्रा करते रहें। बंदरगाहों पर तीन–चार घंटों के लिए उतरें, सैर करें और वापस जहाज में आ जाएं। पृथ्वी का कोलाहल समुद्र तक नहीं पहुँच पाता। समुद्र की गहराई से मुझे कभी डर नहीं लगा....

लूसियेन हँसने लगी। उसने बियर का गिलास अपने होठों से लगाया और एक साथ तीन–चार घूँटों में आधे से अधिक खत्म कर दिया–और मेरा मन कर रहा है, निखिल, कि जमीन के किसी भी छोटे से द्वीप पर उतर जाऊँ, जिसके चारों ओर समुद्र की लहरें उसके किनारे से टकराती हों।

–अब पाँच दिनों के बाद हमेशा के लिए जमीन पर उतर जाना पड़ेगा।...

'बार' में कुछ अन्य यात्री आकर बैठ गए। निखिल और लूसियेन को बैठे देखकर आपस में कानाफूसी करने लगे। सैर के शौकीनी दो–दो, तीन–तीन की टोलियों में डेक पर धीमी चाल से चहलकदमी कर रहे थे, जिससे खाने से पहले अपना पेट हल्का कर सकें। सब की एक बँधी–बँधाई दिनचर्या थी। ब्रेकफास्ट, लंच ईवनिंग टी और डिनर... सबकी घंटियाँ निश्चित समय पर बजती थीं और लोगों के पाँव अपने–आप ही डाइनिंग रूम की ओर घूम जाते थे, मानो वे–सब एक ही वार्ड के कैदी हों। वक्त की कड़ी पाबंदी थी।

लूसियेन का ध्यान कहीं और था। उसे कोई भी वस्तु स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दे रही थी। उसे जान पड़ा कि यदि वह उठ खड़ी हो, तो शायद गिर पड़ेगी।

–सुनो, निखिल, एक बार तुमने कहा था कि मुझसे मिलने के पूर्व तुम अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करते थे।

निखिल चुपचाप लूसियेन के चेहरे की ओर देखता रहा, परंतु कुछ भी जानना उसके लिए! संभव नहीं था। अपने–आप लूसियेन ने कभी रेखा की बात नहीं उठाई थी, लेकिन इस समय निखिल यह भूल चुका था।

–तुम तीन साल पेरिस में रहे, निखिल। तुमने किसी भी लड़की से प्रेम नहीं किया, क्योंकि तुम्हारे मन में तुम्हारी पत्नी बसी हुई थी। तुम उसके प्रति विश्वासघात नहीं करना चाहते थे। लेकिन अब....

—ये सब पुरानी बातें हैं, डार्लिंग। आज इन्हें दुहराने से क्या फायदा।

—नहीं, निखिल,—वह आवेश में बोली—तुम अपनी पत्नी को भूल नहीं सके हो। तुम उससे अलग हो सकते हो मेरे साथ ब्याह भी कर सकते हो, लेकिन उसे भूल नहीं सकते। उसमें और मुझमें बहुत फर्क है न!—लूसियेन का स्वर काँप रहा था। उसे ऐसा जान पड़ रहा था, मानो ये अशुभ बातें चाहे— उसके मन में दबी हुई हों, लेकिन उन्हें मुँह से बाहर नहीं निकलना चाहिए था।

इस बार सचमुच निखिल सिहर—सा उठा। लूसियेन के मुख से इस प्रकार की बातें सुनकर उसके मन में एक भय भर गया। उसने चाहा कि हँसकर उसकी बातों को टाल दे, लेकिन पूरी कोशिश करने पर भी हँसी उसके होंठों पर नहीं आ सकी। कुछ देर बाद तनिक सँभला तो कहने लगा—क्या पागलों की—सी बातें करती हो, डार्लिंग! अगर ऐसी ही बात होती, तो मैं तुमसे पेरिस से आने के लिए कहता ही क्यों? तुम्हें याद नहीं कि पेरिस में हमने इस समस्या पर बड़ी गंभीरता से घंटों सोच—विचार किया था। तब कहीं जाकर तुम्हारे आने की बात तय हुई थी। इस लंबी समुद्र की यात्रा के कारण तुम्हारे दिमाग में ऐसी अजीब बेसिर—पैर की बातें आने लगी हैं।

लेकिन लूसियेन के कानों में उसकी पूरी बात नहीं पहुँची। मन के उद्‌गारों को निकालकर अपने—आपको बस में रखना उसके लिए इतना कठिन हो जाएगा, ऐसा उसने नहीं सोचा था।—नहीं, डार्लिंग, मैं यह दोष तुम पर नहीं मढ़ती। मेरे प्रेम के बंधन शायद इतने जटिल थे कि तुम कभी स्वतंत्रता से इस विषय पर सोच ही नहीं सके। मैंने सोचा था कि ये बंधन दूसरी समस्याओं को पराजित कर देंगे, लेकिन आज मैं महसूस करती हूँ कि वह मेरी गलती थी।

—लूसियेन!लूसियेन! अब चुप हो जाओ! इतना भार मुझसे नहीं उठाया जाएगा! —आवेश में निखिल के हाथ काँपने लगे।

लूसियेन दरवाजे में से बाहर ताकती रही, लेकिन उसकी आँखों में एक गहरी शून्यता उभरी हुई थी। डेक के आगे उसे बड़े—बड़े सफेद पक्षियों का एक झुंड जहाज के ऊपर मँडरता हुआ दिखाई दिया। नीले आकाश की पृष्ठभूमि में उनके फैले हुए सफेद पंख देखकर लूसियेन को यकायक पेरिस की याद बहुत जोरों से

आने लगी। जहाज में चढ़ने के बाद यात्रा में पहली बार घर की याद करके उसके हृदय में कोलाहल–सा होने लगा।

–चलो, बाहर डेक पर चलें,–और बिना निखिल के उत्तर की प्रतीक्षा किए वह खड़ी हो गई।

डेक पर चहल–पहल शुरु हो गई थी। यही जहाज का केंद्र था, जहाँ शाम के समय रोज लोग नए–नए कपड़े पहनकर घूमा करते थे, मानो शहर का कोई चौक हो। शाम की ताजी हवा में लोग दिन–भर के आलस्य को दूर करने की कोशिश किया करते थे। कोने में रखी एक मेज पर दो लड़के टेबिल टेनिस खेल रहे थे और वक्त काटने के लिए कुछ लोगों की भीड़ उनके इर्द–गिर्द इकट्ठी हो गई थी, यद्यपि उनमें से बहुत–से दर्शकों को खेल में जरा भी दिलचस्पी नहीं थी। कुछ लोग अपनी टोलियाँ बनाई डेक की रेलिंग का सहारा लिए डेक की व्यस्त जिंदगी से अपना मनोरंजन कर रहे थे।

–तुम अपने केबिन में जाकर कपड़े बदल आओ, लूसियेन। खाने में अभी देर है।

–मेरे कपड़े ठीक हैं।

डेक के सिरे पर जाकर दोनों रेलिंग के पास खड़े हो गए। निखिल रेलिंग पर झुककर समुद्र में झाँकने लगा और लूसियेन डेक की भीड़ को देखती रही। निखिल को अचानक याद आया कि पिछले तीन–चार दिनों में लूसियेन ने अलग–अलग केबिन लेने की बात पर दुःख प्रगट नहीं किया। यात्रा के पहले दिन से ही दिन में तीन चार बार इसकी चर्चा करना उसका दैनिक कार्य बन गया था। अब शायद यह विषय पूर्ण रूप से उसके दिमाग से उतर गया था। लेकिन लूसियेन के स्वभाव में अचानक इतना परिवर्तन कैसे आ गया?

तीन भारतीय लड़कियाँ उनके पास आकर खड़ी हो गईं। निखिल घूम गया। वे तीनों लूसियेन के साथ एक ही केबिन में रहती थीं। उन्होंने लूसियेन को बतलाया था कि वे तीनों केंब्रिज से अपनी शिक्षा समाप्त करके लौट रही हैं।

–हलो, लूसियेन!

लूसियेन ने उनकी और मुस्कुरा देखा।

–अदन का इंतजार हो रहा है?

–अब तो ये चार दिन बड़ी मुश्किल से बीतेंगे।

–जहाज की लाइफ बहुत बोरिंग हो गई है।

–रात–दिन वही चेहरे देखते–देखते मैं तो तंग आ गई हूँ!– एक ने निखिल की ओर मुस्कुराकर देखा।

पहली बार लूसियेन को उन तीनों के जीवन से ईर्ष्या होने लगी। घर लौटने की उन्हें कितनी प्रसन्नता है, कितना उत्साह है! इन्हें किसी की चिंता नहीं इतनी भारतीय स्त्रियाँ उसने पहली बार एक ही स्थान पर इतने अधिक समय तक नहीं नहीं देखी थीं। वह सोचने लगी थी कि उनमें और योरोप की स्त्रियों में क्या अंतर है?

–बम्बई में तुम्हें मेरे घर जरूर आना पड़ेगा, लूसियेन! मैंने तुम्हें अपना पता दे दिया है। –उनमें से एक ने कहा।

–अगर बम्बई पहुँची तो! लूसियेन ने हँसकर कहा।

–क्यों? बम्बई में कुछ दिन रुकने वाली थी न?

–अब शायद प्रोग्राम थोड़ा बदलना पड़े।

–लेकिन एक–दो दिन तो रूकोगी ही। तुम्हें अपने होटल का पता नहीं मालूम, नहीं तो मैं खुद आकर तुम्हें ले जाती।

–नहीं, मैं खुद ही तुम्हारे घर जाऊँगी अगर...– लेकिन यह अक्सर 'अगर' उसने इतने धीरे से कहा कि निखिल के अतिरिक्त उसे और कोई सुन नहीं पाया।

निखिल चुपचाप लुसियेन की बातें सुनता रहा।

खाने के बाद दोनों डेक की छत पर आ गए। नीचे डेक पर रात को फिल्म दिखाई जानेवाली थी, अतः उत्सुकता से यात्री बीच की सीटों को अपनी टोलियों के

लिए रिजर्व करा रहे थे। डेक का कोलाहल बहुत धीमें स्वर में ऊपर पहुँच रहा था। वे दोनों धीरे–धीरे टहलने लगे। निखिल ने सिगरेट सुलगा ली थी। दोनों को एक–दूसरे की उपस्थिति का आभास नहीं हो हो रहा था, वे केवल अपने कदमों की चाप सुन रहे थे। आकाश में चाँद निकल आया था, जिससे छत पर अँधेरा नहीं था, नावों की परछाइयाँ फर्श पर विचित्र–सी आकृतियाँ बन रही थीं। हवा बड़े फर्राटे के साथ चल रही थी।

यकायक लूसियेन ने निखिल का हाथ पकड़कर कहा–मैं थक गयी हूँ, निखिल। चलो, रेलिंग के पास जाकर बैठ जाएं।

निखिल ने लूसियेन का हाथ दबाया, लेकिन लूसियेन की ओर से उसे कोई उत्तर नहीं मिल सका। सह बर्फ के सामने ठंडी बनी रही। वे रेलिंग के पास फर्श पर बैठ गए। लूसियेन ने अपनी टाँगे समेट लीं और घुटनों पर अपना चेहरा टिका दिया।

–लूसियेन!

–हाँ, –उसने बिना निखिल की ओर देखे उत्तर दिया।

कुछ भी बोलने से पूर्व निखिल थोड़ी देर तक झिझकता, लेकिन लूसियेन बिना हिल–डुले सामने की ओर देखती हुई बैठी रही।

–तुम डेक पर उन लड़कियों से कैसी बातें कर रही थी?–फिर अपने स्वर में आत्मीयता का भाव लाकर कहने लगा–तुम्हें एक हफ्ता तो बम्बई में रूकना ही पड़ेगा। उससे पहले मैं लखनऊ में अपने काम नहीं निबट सकूँगा। मुझे कितने ही छोटे –मोटे काम करने हैं।

इस विषय पर अधिक कहने–सुनने की लूसियेन की इच्छा नहीं थी– छोड़ो इन बातों को, निखिल। आज रात इस तरह की बिजनेस टाक को मेरा मन नहीं कर रहा। न....न.... निखिल, आज इस तरह की बातें नहीं होंगी। –फिर कुछ रुककर बोली–एक दिन मुझे ये क्षण याद रहेंगे, जब ऐसी रात को हम दोनों डेक की छत पर अकेले बैठे हुए थे, दुनिया की कोई चिंता हमारे सामने नहीं थी। हमारी आँखों के सामने फैला हुआ समुद्र था, बिन बादलों का आकाश था।...तब बरसों बाद

आज की याद करके ऐसा जान पड़ेगा, मानो हम किसी दूसरे की कहानी याद कर रहे हों। अच्छा, मुझे एक सिगरेट दो, निखिल।

लूसियेन को रोकने का साहस निखिल में नहीं था।

उसने जेब में एक सिगरेट निकालकर लूसियेन की उँगलियों में दबा दी। दियासलाई की रोशनी में उसने लूसियेन के चेहरे को देखा, तो क्षण–भर के लिए दियासलाई की तिल्ली काँप उठी। ऐसी सफेदी उसके चेहरे पर छायी हुई थी, मानो किसी ने खड़िया पोत दी हो। जाना–पहिचाना, चिरपरिचित चेहरा उसे ऐसा जान पड़ा, मानो पहली बार उसे देख रहा हो। लेकिन लूसियेन ने उसकी चिंता और उद्विग्नता पर गौर किया। यदि उस समय वह रेलिंग से समुद्र में कूद भी पड़ता, तो उसे कुछ देर तक वह उसी प्रकार शांत और उदासीन–सी बैठी रहती।

–कल सुबह अदन में मुझे देखकर ज़ाक बहुत खुश होगा। कितनी ही बार उसने मुझे अदन आने का निमंत्रण दिया, लेकिन कभी जाना हो ही नहीं सका। और अब अचानक उसके पास जा पहुँचूंगी। अच्छा निखिल, अदन कैसा शहर है?

निखिल को ऐसा आभास हुआ, मानो उसका उत्तर जानने की उत्सुकता उसे नहीं थी। वह चुप बैठा रहा और लूसियेन की सिगरेट के जलते भाग को देखता रहा।

–बोला, निखिल!...आजकल मेरे प्रश्न का उत्तर तक तुम नहीं देते! मैं शायद अपने प्रश्नों से तुम्हें बहुत तंग करने लगी हूँ।

निखिल ने अकस्मात् लूसियेन के कंधे को पकड़ लिया और चिल्लाकर बोला–लूसियेन! ...लूसियेन!– तुम्हारे मन में क्या है? तुम खोलकर अपने मन की बात मुझे क्यों नहीं बतलाती? पिछले तीन–चार दिनों में तुम्हारा व्यवहार देखकर मुझे डर लगने लगा है।

लूसियेन बिना हिले–डुले बैठी रही। निखिल को ऐसा लगा, जैसे उसका सारा शरीर काँप रहा हो। उसने और भी कसकर लूसियेन को अपने से सटा लिया–बोलो, लूसियेन!...तुमने तो कभी मुझसे कुछ छुपाया नहीं!–अब अस्फुट स्वर में कहने लगा।

बड़े जोर से लूसियेन की रुलाई बाहर निकल पड़ी, उसे रोकने की उसने चेष्टा नहीं की। उसकी हल्की–हल्की सिसकियों का स्वर जब निखिल के कानों में पहुँचा, तो उसे ऐसा जान पड़ा, मानो वह अथाह जल में डूब रहा हो। उसने लूसियेन के चेहरे को बड़े प्यार से उठाया, उसके गाल आँसुओं से भीगे हुए थे, मानो वर्षा से तर पहाड़ हों। निखिल ने जेब में से रूमाल निकालकर उसका चेहरा पोंछा–लूसियेन!... डार्लिंग!

और लूसियेन फिर रोती हुई निखिल से लिपट गई। उसने अपने हाथों में अपना चेहरा ढँक लिया और मुँह निखिल की छाती में छुपा लिया।

निखिल उसकी पीठ, बाल, गर्दन सहलाता रहा, लेकिन उसके मुख से सान्त्वना का कोई शब्द नहीं निकला। वह अपने–आपको दोषी अनुभव कर रहा था। अब तक वह अपनी समस्याओं में इतना उलझा हुआ था कि कभी लूसियेन की आंतरिक स्थिति को जानने की उसने कोशिश नहीं की। और लूसियेन ने स्वयं कभी अपने मन की बात उसे नहीं बतलायी, इस क्षण उसने अनुभव किया कि लूसियेन का महत्व उसके जीवन में कितना है!

कुछ देर तक वे दोनों उसी अवस्था में बैठे रहे। चारों ओर एक गहरी नीरवता छाई थी। लहरों के जहाज से टकराने के स्वर बहुत नियमित रूप से गूँज रहे थे।

–निखिल, मैं सोचती हूँ कि तुम मेरे साथ सुखी नहीं रह सकोगे। मेरा तुम्हारे साथ चले आना एक गलती थी।

–लूसियेन!

लेकिन लूसियेन ने उसे विरोध नहीं करने दिया। उसने अपना एक हाथ निखिल के होंठों पर रख दिया–नहीं, डार्लिंग! आज तुम्हें मेरी बातें सुननी पडेगी। मैंने अपना फैसला कर लिया है और बहुत सोच–समझकर किया है, उसे किसी भी हालत में बदला नहीं जा सकता!

निखिल ने लूसियेन के दोनों हाथ पकड़ लिए। चाँद की हल्की–हल्की रोशनी में उसने लूसियेन के काँपते हुए होंठों को देखा, हवा में उसके भूरे बाल उड़ रहे थे, जैसे बिना पत्तियों की झाड़ियाँ हवा में डोलती हों।

—सुनो, निखिल, मुझसे ब्याह करके तुम पूर्णरूप से सुखी नहीं रह सकोगे। कोई—न—कोई काँटा तुम्हें हमेशा चुभता रहेगा। मेरे कारण तुम्हें अपनी पत्नी को छोड़ना पड़ेगा, जिसे कुछ देर पहले तुम प्रेम करते थे। यह खाई हमेशा हम दोनों के बीच में बनी रहेगी, जिसे तुम कभी लाँघ नहीं पाओगे। मेरा पूर्ण रूप से कभी तुम पर अधिकार नहीं हो सकेगा, कोई—न—कोई अदृश्य छाया हमेशा मँडराती रहेगी। आज तुम इसका विरोध भी करो, लेकिन मेरा मन बार—बार यही कहता है कि तुम सुखी नहीं रह सकेंगे। पिछले तीन—चार दिनों से मैं इसका विरोध कर रही हूँ, तर्क देकर अपने मन को समझाने की कोशिश कर रही हूँ, लेकिन अंत में पराजय मेरी ही हुई। निखिल जरा सोचो कि शादी के बाद यदि मैं ऐसा महसूस करूँ कि तुम्हारे हृदय के कुछ ऐसे छुपे हुए स्थान हैं, जहाँ मैं प्रवेश नहीं कर सकती, तो मुझ पर क्या बीतेगी?... नहीं...नहीं, निखिल, यह मेरे स्वभाव के विरूद्ध है।— बातें करते समय लूसियेन के स्वर में इतनी स्थिरत और दृढ़ता थी कि एकबारगी इसे केवल उसका उन्माद कहकर टाल देने का साहस निखिल में नहीं आया। लूसियेन का चेहरा झुका हुआ था, मानो ऊपर उठाकर निखिल को देखने में उसे भय महसूस हो रहा था।

—मैं कल अदन मैं उतर जाऊँगी। कुछ दिन जाक के पास रहकर योरोप जाते हुए किसी जहाज में अपनी सीट रिजर्व करवा लूँगी।— लूसियेन ने अत्यंत शांत मुद्रा में कहा।

निखिल उसका निश्चय सुनकर कुछ देर के लिए हक्का—बक्का—सा रहा गया। कोशिश करने पर भी उसके मुँह से आवाज नहीं निकल सकी। उसे अपना सारा शरीर सुन्न—सा होता जान पड़ा, मानो उसके भीतर सब—कुछ रूक गया हो। उसे केवल लूसियेन का धुँधला—सा चेहरा दिखाई दे रहा था, मानो वह किसी की आकृति न होकर उसकी छाया हो।

जब उसमें थोड़ी चेतना आई, तो वह पागलों की भाँति चिल्लाकर बोला—नहीं, लूसियेन, ऐसा कभी नहीं हो सकता! तुम अदन में कैसे उतर सकती हो। हम दोनों का जीवन एक साथ बँध चुका है और अब दुनिया की कोई भी शक्ति उसे तोड़ नहीं सकती! तुम मेरे साथ हिंदुस्तान चलोगी, हम दोनों इकट्ठे एक ही पथपर आगे बढ़ेंगे।

—नहीं, निखिल!

—तुम्हारी धारणाएं कोरी कल्पना हैं, लूसियेन, इनमें कुछ भी तथ्य नहीं है। इन दस दिनों की यात्रा में मैं क्या इतना बदल गया हूँ, जो तुम्हे मेरे विषय में संदेह होने लगा है? क्या इन दस दिनों का भ्रांतियाँ सत्य हैं, और पेरिस में बिताए वे तीन महीने सत्य नहीं थे? कोई भी इस पर विश्वास नहीं कर सकता, लूसियेन!

—नहीं, निखिल, तुम तर्क मत करो। ऐसी बातों में तर्क नहीं किए जाते। जब मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हुई थी, तो कभी मैंने तर्कों का सहारा नहीं लिया था आज वह भी नहीं करूंगीं।—लूसियेन के स्वर में बहुत आत्मविश्वास था, कहीं कोई भी झिझक नहीं थी। वह स्नेह—भरे स्वर में कहने लगी— तुम जानते थे कि मेरे माँ—बाप हमारे विवाह के हक में नहीं थे, लेकिन कभी मैंने उनकी बात नहीं सुनी। सदा ही मैंने अपने मन को खोजा है और, निखिल, अदन उतरने का फैसला भी मैंने बहुत सोच—विचार कर किया है, कोरी भावुकता में मैं ऐसा नहीं कर रही। इस बात को तुम भी जानते हो।

लेकिन निखिल से उसकी पूरी बात नहीं सुनी गई। उसने कसकर लूसियेन के हाथों को पकड़ लिया— लूसियेन! तुम मुझे इस तरह अकेला नहीं छोड़ सकती। मैं सच कहता हूँ, लूसियेन, कि जितना प्रेम मैंने तुमसे किया है...

लूसियेन ने अपना हाथ फिर उसके होंठों पर रख दिया—चुप हो जाओ, निखिल। इस तरह की बातें मत करो। मुझसे यह सब नहीं सहा जाएगा। मैंने जो—कुछ तुमसे पाया है? उसे मैं कभी भूल नहीं सकूँगी। —लेकिन उसकी यह भावुकता अधिक देर तक नहीं रह सकी। उसका जी चाहने लगा कि वह जोर—जोर से हँसे।

फिर निखिल की बातों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। निखिल को अब भी इस पर विश्वास नहीं हो रहा था कि वह अदन में उतर जाएगी और वह अकेला हिंदुस्तान पहुँचेगा। उसका मन कह रहा था कि लूसियेन ने यह—सब आवेश में कहा है, कल सुबह तक वह अपने निश्चय को भूल जाएगी। लूसियेन पर अपनी बातों की कुछ भी प्रतिक्रिया न होते देखकर वह चुप हो गया।

कब समय बीत गया, कब फिल्म शो खत्म हो गया और यात्री अपने केबिनों में रात काटने के लिए चले गए, कब रात्रि की नीरवता ने समुद्र के ऊपर अपना जाल बिछा दिया, इसका पता उन दोनों में से किसी को भी नहीं चला। निखिल लगातार सिगरेटें पीता रहा, मानो सिगरेट के धुएँ में उसे मुक्ति मिली हों। लूसियेन चुचाप घुटनों पर मुँह टेके सागर की गहराई में गोते खाती रही, उसके लिए डेक की छत पर चारों ओर दृष्टि डाली, लेकिन कहीं कोई दिखाई नहीं दिया।

–निखिल!

निखिल ने अनुभव किया, मानो वह अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ चिल्लायी हो। लेकिन उसके शरीर में थोड़ी–सी भी सिहरन नहीं हुई।

आवेश में आकर लूसियेन ने निखिल के दोनों कंधों को पकड़कर जोर से झकझोर दिया। निखिल ने हड़बड़ाकर अपनी आँखें खोल दीं और अपना सिर घुटनों से ऊपर उठाकर शून्य आँखों से लूसियेन की ओर देखने लगा, मानो उसे पहचानने की कोशिश कर रहा हो। उसके अस्त–व्यस्त बाल हवा में उड़ते–उड़ते अब उसके माथे पर शांत होकर ठहर गए थे। उसने सोचा कि वह यहाँ कैसे आया, वह तो अपने केबिन की बर्थ पर सो रहा था, उसे यहाँ कौन उठा लाया?

लूसियेन ने उसके शरीर में प्राणों का स्पन्दन देखा, तो वह अपने–आपको रोक नहीं सकी। 'निखिल' कहकर वह उसके गले से लिपट गई और बच्चों की तरह रोने लगी। मन में एक अजीब–सा उत्साह लहरें मारने लगा था। उसने निखिल के गले में अपनी बाँहें डाल दीं और उसकी ठंडी छाती को अपने गरम–गरम आँसुओं से धोने लगी।

–निखिल!....निखिल!

निखिल चुपचाप उसके बाल सहलाता रहा। सुबह की हवा में रात–भर की बेचैनी धुली जा रही थी।

–निखिल!–लूसियेन की सिसकियों में लगातार उसका नाम निकल रहा था, लेकिन निखिल के कान डेक और समुद्र से दूर किसी अपरिचित दिशा से आते हुए स्वरों में डूबे हुए थे।

अदन की जमीन दिखाई देने लगी थी। छोटी–छोटी मटियाले रंग की रेतीली पहाड़ियाँ समुद्र तट से ऊपर उठकर अपने अस्तित्व की घोषणा कर रही थीं। सूर्य की पहली किरणों में समुद्र का एक हिस्सा चमकने लगा था और दूर–दूर तक दिखाई देती हुई छोटी–छोटी लहरों के किनारे सूर्य के प्रकाश में सफेद मोती–से दिखाई देते थे, मानो उन असंख्य मोतियों को सुबह–सुबह किसी ने बिखेर दिया हो।

एक स्टुअर्ड छत पर सफाई करने आया। उसे देखकर ये दोनों उठ खड़े हुए। लूसियेन ने अपनी उँगलियों से अपने उलझे बालों को सुलझाया और उन्हें पीछे की ओर कर दिया, अपनी स्कर्ट की सिलवटें ठीक कीं। स्टुअर्ड ने समझा कि वे दोनों सूर्योदय देखने तड़के ही छत पर आए होंगे, रात्रि के रहस्यमय इतिहास का पता उसे नहीं चल सका।

–चलो, डेक पर चलें, निखिल।

समुद्र से तंग आकर यात्री बड़ी उत्सुकता से अदन की सैर करने के लिए डेक की रेलिंगों पर झुके अदन को देख रहे थे। उनके कोलाहल से प्रातः की शांति भंग हो चुकी थी। समुद्र पर छाये कोहरे का आवरण धीरे–धीरे फटता जा रहा था।

–मैं केबिन में से अपना सामान ले आती हूँ।

निखिल ने एक बार बड़ी उत्सुकता, याचना और स्नेह–भरी दृष्टि से लूसियेन की ओर देखा, उसकी आँखें प्रश्न पूछ रही थीं। लूसियेन क्षण–भर के लिए ठिठकी रही और फिर 'नहीं, निखिल' कहकर अपने केबिन की ओर चली गई। वे दोनों रेलिंग पर झुके तट की ओर देख रहे थे। पैरों के पास लूसियेन के दो सूटकेस और अटैची रखी हुई थी। लूसियेन की आँखें लाल थीं, उसने केबिन में जाकर अपना चेहरा धोया था, पाऊडर लगाया था, होंठों को लाल किया था, बालों को सँवारा था, लेकिन चेहरे पर थकान के चिह्न बचे हुए थे।

–तुम जाक के घर चलोगे, निखिल?

निखिल ने अस्वीकृति से अपनी गर्दन हिला दी–मेरी तबीयत ठीक नहीं है।

लूसियेन मानो इसी उत्तर को सुनने की आशा कर रही थी।

जहाज पृथ्वी की सीमा में जा लगा। मशीन की गड़गड़ाहट बंद हो गई। यात्रियों का कोलाहल बढ़ने लगा। तट पर कुछ लोग खड़े उत्सुकता से यात्रियों की ओर देख रहे थे।

लूसियेन ने अपना हाथ बढ़ाकर निखिल से मिलाया। दोनों में से किसी ने भी एक शब्द तक नहीं कहा। स्टुअर्ड के हाथों में सामान सौंपकर एक हाथ में बैग लिए लूसियेन अन्य यात्रियों के साथ जहाज की सीढ़ियाँ उतरने लगी। उसने एक बार भी मुड़कर रेलिंग पर झुके निखिल को देखने की कोशिश नहीं की।

निखिल चुपचाप लूसियेन की पीठ देखता रहा, मानो उसके कदम गिन रहा हो। उसे जान पड़ा, मानो जानबूझकर वह बहुत धीरे–धीरे सीढ़ियाँ उत्तर रही हो, मानो घूमकर शायद फिर वह सीढ़ियाँ चढ़ने लगेगी। उसे जान पड़ा जैसे, जमीन पर उतरकर वह किसी व्यक्ति के गले से जा लिपटी हो, वह जाक होगा। अब दोनों बातें कर रहे थे, शायद वह उसके विषय में प्रश्न पूछ रहा हो। वह उत्सुकता से डेक की ओर देख रहा था, मानो उसे पहचानने की कोशिश रहा हो। फिर वे दोनों आगे बढ़ गए। एक बार लूसियेन ने मुड़कर उसकी ओर देखा या शायद यह उसका भ्रम था फाटक पार करके वे दोनों अदृश्य हो गए। निखिल रेलिंग पर झुका रहा, रेलिंग को छोड़ते हुए उसे भय लग रहा था, उसे लग रहा था, जैसे वह रेलिंग से नीचे समुद्र में गिरा जा रहा हो। ❐❐